Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 GISRRJ | Volume 2 | Issue 2 | ISSN : 2582-0095

सल्तनतकालीन भारतीय हिन्दू स्त्रियों की स्थिति

सन्नी देवल दास
शोधार्थी, विश्वविद्यालय इतिहास विभाग, तिलकामाँझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

सल्तनत काल में स्त्रियों के कार्य और उनकी स्थिति विशेष रूप से अधीनस्थ रही है और कालान्तर में पुरुष की सेवा और जीवन के प्रत्येक चरण में उसपर निर्भर रहना ही क्रमशः उसके कार्य और स्थिति माने जाने लगे। वह पुत्री के रूप में अपने पिता के संरक्षण में, पत्नी के रूप में अपने पति के संरक्षण में और विधवा के रूप में (उस स्थिति में जबकि उसे अपने पति की मृत्यु के पश्चात् जीवित रहने दिया जाता) अपने ज्येष्ठ पुत्र की देखरेख में रहती थी।[1] संक्षेप में उसका जीवन निरन्तर संरक्षण का जीवन था और सामाजिक विधान एवं परम्पराओं में उसे एक प्रकार से मानसिक रूप से अविकसित ठहराया गया है। पैदा होने पर लड़की को अनचाहा मेहमान समझा जाता, क्योंकि हिन्दुओं के धार्मिक दृष्टिकोण के अनुसार हतभागी पुत्री भूली विसरी घड़ी में किये गए अपने पिता के पास-कुंज का शोधन नहीं कर सकती।[2] अतः उसे कुछ कबीलों में तो शिशुकाल में ही मार डाला जाता था। यदि उसे जीवित रहने दिया जाता तो उसे पति के साथ अटूट बंधन में बांध दिया जाता। यदि गर्भावस्था में उसकी मृत्यु हो जाती तो वह कभी-कभी 'चुड़ैल' नामक भयानक प्रेतात्मा का रूप धारण करके पड़ोस में अड्डा जमा लेती। मृत्यु या आत्म-बलिदान ही उसे मुक्ति प्रदान करते थे। इस प्रकार जन्म से लेकर मृत्यु तक स्त्री की दशा अत्यन्त दुखद रहती थी। उसका धर्म और अन्य सुधारवादी आध्यात्मिक आंदोलन भाग्य पर संतोष करने की बात कहकर उसे सांत्वना प्रदान करते किन्तु उन्होंने भी सावधानी से उसे किसी अधिकारिक स्थिति से और उसे अपनी आंतरिक धर्मसत्ता से भी परे रखा।[3]

हिन्दू विचारधारा के अनुसार स्त्री का प्रमुख कार्य पुत्र पैदा करना था और यदि वह पुत्र को जन्म दे देती तो लोग उसका सम्मान करते, उसकी देखभाल करते। माता-पिता के प्रति सन्तानों में प्रेम यह बिलकुल सत्य था और एक भारतीय माँ के लिये यह महान् सन्तोष की बात थी। अन्य बातों में भारतीय नारी का क्षेत्र कठोर रूप में घर और घरेलू देख-भाल तक ही सीमित था। उसके सारे स्वप्न स्वयं को पतिव्रता सिद्ध करने और पति को प्रसन्न रखने में ही केन्द्रित रहते थे।[4]

स्त्रियों की बौद्धिक संस्कृति में वर्गानुसार भेद था। ग्रामों में, जहाँ स्त्री ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था का एक अंग थी, साधारण अर्थ में सांस्कृतिक उत्थान की गुंजाइश नहीं थी। हम पहले इंगित कर चुके हैं कि किस प्रकार स्त्रियों की बुनाई की कुछ क्रियाओं से वंचित रखा गया था, यद्यपि घरेलू कार्यों में ये बन्धन नहीं थे। दूसरी ओर कृषक-स्त्रियों के दरिद्र वर्ग को दुर्भाग्य से घरेलू काम, कृषि-कर्म और बच्चों के साथ इतना अधिक व्यस्त रहना पड़ता था कि उन्हें बौद्धिक कार्य-कलापों या मनोरंजन के लिए भी समय नहीं मिल पाता था। इस प्रकार उनकी मानसिक संस्कृति बहुत पिछड़ी रहती थी जिससे लोक-कथाओं के विद्यार्थी अच्छी तरह परिचित है।

उच्च वर्ग का जीवन साहसिक कार्यों और संकटों से परिपूर्ण रहता था जिससे कलाओं और विज्ञानों की उन्नति को प्रोत्साहन मिलता था। देवलरानी, रूपमती, पद्मावत और मीरा बाई हिन्दू संस्कृति के अच्छे उदाहरण हैं। हाजी दबीर का कथन है कि मुहम्मद तुगलक द्वारा काराजल की पहाड़ियों (कुमायूँ) पर आक्रमण किये जाने का एक कारण यह भी था कि वह उस भाग की स्त्रियों को पाना चाहता था, जो अपनी सुन्दरता के लिए विख्यात थीं। सुल्तान रजिया दिल्ली के सिंहासन पर आरूढ़ हो सकी, इससे सिद्ध हो सकता है कि कुलीनवर्ग में एक स्वस्थ परम्परा का समावेश हुआ। हमें गुलबदन बेगम से सूचना मिलती है कि सम्राट हुमायूँ के हरम की महिलाएं अपने पुरुष-मित्रों और अभ्यागतों से स्वतंत्रतापूर्वक मिलती थी। वे

कभी-कभी पुरुषवेश में बाहर जातीं, पोलो खेलती और संगीत का अभ्यास करती थी। वे गोफन चलाने और अन्य व्यावहारिक कलाओं में निपुण रहती थीं।

किसी व्यक्ति के जीवन में आयु-विषयक विभिन्न चरण, जैसे- जन्म, किशोरावस्था, यौनावस्था और मृत्यु तथा इनमे गुंथे विभिन्न रिवाज ही घरेलू जीवन, विशेषकर ग्राम्य-समुदाय के घरेलू जीवन की महत्वपूर्ण घटनाएँ थीं। ये सारे रिवाज सावधानी से बड़ी सूक्ष्मता से बनाए गए थे। धार्मिक भावनाएं इनमें श्रेष्ठ रूप में मुखरित हुई। समाज किसी व्यक्ति के सम्मान की परख इस बात से भी करता था कि इन सामाजिक और धार्मिक क्रियाओं के पालन का वह कितना ध्यान रखता है। जैसे परिवार में सन्तानोत्पत्ति की घटना अत्यन्त महत्व की थी। चतुर और प्रबुद्ध लोगों ने चाहे मृत्यु और अगले जीवन के रहस्यों को अधिक महत्व दिया हो किन्तु अधिक स्वस्थ मस्तिष्क वालों के लिए संसार में नए प्राणी का आगमन ही उत्सव मनाने योग्य था।[5] अनेक छोटे-छोटे पालने नन्हीं मेहमान का स्वागत करने के लिए बहुधा पहले से ही तैयार कर लिये जाते थे।[6]

यदि पुत्र उत्पन्न होता तो हिन्दू घर में बड़ी हलचल रहती। पिता ताजे पानी से स्नान करने और पूर्वजों की आत्माओं तथा कुल-देवताओं की प्रार्थना करने दौड़ पड़ता। तत्पश्चात् वह एक अच्छी अंगूठी निकालता, उसे मक्खन और शहद में डुबाता और फिर उसे शिशु के मुख में रखता था।[7] उसी समय ज्ञानी पण्डित जन्मपत्री बनाने के लिए शिशु-जन्म की घड़ी और अन्य सूचनाएं लिखने में व्यस्त हो जाता। यदि वह जन्म की ठीक घड़ी लिखने भूल जाता तो वह जनम का लग्न निकालने हेतु सावधानी से शिशु के शरीर के चिह्नों की जांच करता। इन प्रारम्भिक क्रियाओं के पश्चात् आनन्दोत्सव प्रारम्भ होते जिनमें स्त्रियाँ प्रधानरूप से भाग लेती, शिशु के स्वास्थ्य के लिए निछावर (निसार या उतारा) किया जाता और सम्पन्न तथा दरिद्र, अमीर तथा जनसाधारण सबको अच्छे उपहार बाँटे जाते।

विवाह के लिये कोई निश्चित आयु नहीं थी। हिन्दू और मुस्लिम दोनों ही लड़के-लड़कियों का विवाह अल्पायु में कर देने के पक्ष में थे।[8] अकबर इस स्थिति पर हस्तक्षेप करने का इच्छुक था। उसने लड़कों के लिये 16 वर्ष और लड़कियों के लिए 14 वर्ष विवाह की अल्पतम आयु निश्चित की। यह कहना कठिन है कि कहाँ तक उसके नियमों का पालन किया गया।[9] सन्तानों का विवाह निश्चित करना और विवाह से सम्बन्धित रिवाजों और परम्पराओं का निरीक्षण करना माता-पिता, विशेषकर पिता का विशेषाधिकार था। सन्तान के विवाह के समय अनेक नाजुक और उलझनपूर्ण समस्याएं सामने आती थी, जैसे परिवार की स्थिति, पूर्वजों से सम्बन्धित क्रियाएं और दोनों पक्षों का सामाजिक सम्मान। माता-पिता बहुधा चप्पे-चप्पे पर अपना उत्तरदायित्व बड़ी सावधानी से निबाहते थे। विवाह विवाहित युगल के व्यक्तिगत मामले से कहीं अधिक, एक पारिवारिक प्रश्न था।

किसी व्यक्ति की मृत्यु इस जीवन का एक मोड़ थी, जब अस्तित्वहीन न होते हुए वह एक जीवन से दूसरे जीवन में प्रवेश करता था। उसकी मृत्यु के समय स्फुट संस्कार होते और बाद में भी कुछ क्रियाएं होती। जब कोई हिन्दू मरणोन्मुख होता तो लोग उसकी देह भूमि पर लिटाने में शीघ्रता करते, पुरोहित मंत्रोच्चार प्रारम्भ कर देता और सम्बन्धीगण दरिद्रों और जरूरतमंदों को दान करना प्रारम्भ कर देते जिससे उसकी आत्मा सुगमता से परलोक जा सके। भूमि गाय के गोबर से लीपी जाती और उस पर कुश बिछा दी जाती, फिर इसके ऊपर मृतदेह को लिटा दिया जाता था। सिर उत्तर की ओर तथा पैर दक्षिण की ओर रहते और चेहरा नीचे की ओर। यदि पवित्र गंगाजल उपलब्ध होता तो मृतदेह के ऊपर उसकी कुछ बूंदे छिड़की जाती, ब्राह्मण को गोदान किया जाता, मृत व्यक्ति के सीने पर कुछ तुलसीपत्र रखे जाते और कपाल पर तिलक लगा दिया जाता। इन तैयारियों के पश्चात् देह अरथी में रख दी जाती, इस प्रकार उसे भस्म करने की तैयारी पूरी हो जाती। रूढ़िवादी सिद्धांत के अनुसार ब्राह्मण की देह को पानी में फेंक देना चाहिए, क्षत्रिय की

देह जलाना चाहिए और शूद्र की देह को दफनाना चाहिए।[10] वास्तव में, यदि किसी व्यक्ति की मृत्यु अपने घर और सम्बन्धियों से दूर होती तो एक स्मृति-दाहसंस्कार होता जिसमें हिरन की एक हड्डी, एक बाँस, कुछ आटा, कुछ पत्ते और नारियल- जो सम्भवतः मृत व्यक्ति के अवशेषों के प्रतीक माने जाते- अग्नि को भेंट किये जाते। मृत व्यक्ति के पुत्र, भाई, मित्र और शिष्य अपने सिर और दाढ़ी मुंढाते और शव को, जिसे कभी-कभी मृत व्यक्ति की प्रिय वेशभूषा पहना दी जाती थी, श्मशानभूमि ले जाते, जहाँ वह यथोचित क्रियाओं के पश्चात् जला दिया जाता। दाह-क्रिया के पश्चात् अस्थियाँ एक पात्र या मृगछाला में एकत्र कर ली जाती और यदि सम्भव हुआ तो गंगा में प्रवाहित की जाती।

पति की मृत्यु पश्चात् कुछ परिस्थितियों में हिन्दू पत्नी के जलने की क्रिया को सती प्रथा कहा जाता था[11] और जो स्त्री जलती थी उसे 'सती' कहा जाता था। साधारणतः यह प्रथा हिन्दू समाज के उच्च वर्ग तक सीमित थी और राजपूतों की वीर जातियाँ इसका विशेष समर्थन करती थी। निम्न वर्गों की स्त्रियाँ तो अपने पति की अर्थी के साथ श्मशान तक भी न जा सकती थी। आत्म-बलिदान का बन्धन पारस्परिक नहीं था, क्योंकि पत्नी की मृत्यु सामने होने पर पति के लिए यह लागू नहीं होता था।[12] यह क्रिया सम्भवतः भारतीय कबीलों की आदिम प्रथाओं पर आधारित थी और आर्यों तथा अन्य आक्रामकों द्वारा इसे आत्मसात कर लिया गया।[13] कुछ भी हो, यह प्रथा काफी पुरानी है।[14] यदि मृत पति का शव उपलब्ध होता तो पत्नी उसके साथ जला दी जाती। इसे सहमरण कहा जाता।

जौहर की प्रथा प्रायः राजपूतों तक ही सीमित थी, यद्यपि अन्य उदाहरणों की भी कमी नहीं है।[15] जब युद्ध में राजपूत सरदार और उसके योद्धा पराजय के निकट आ जाते तो वे बहुधा अपने स्त्री-बच्चों की हत्या कर डालते या उन्हें तहखाने के किसी कमरे में बन्द करके भवन में आग लगा देते। यह सती प्रथा से भी कहीं अधिक भयानक जौहर प्रथा की भी राजपूत समाज मे प्रचलन था। राजपूत रानियों

युद्ध में पराजित होने की खबर पाने पर अपनी प्रतिष्ठा एवं इज्जत बचाने के लिये सामूहिक रूप से आग में कूद कर जौहर व्रत का पालन करती थी जो उसकी असीम वीरता एवं साहस की कहानी बन जाती।

सन्दर्भ सूची:

1. हिन्दू विवाह पद्धति में पत्नी के स्थान के लिए, मुल्ला, 'हिन्दू ला', 371, सामान्य हिन्दू विधान में तलाहक को स्थान नहीं है, क्योंकि हिन्दू विवाह पति और पत्नी के मध्य न टूटने वाला बन्धन है।
2. राजपूतों में बालिकाओं की हत्या के लिये देखिए, जर्नल जेम्स टॉड द्वितीय, 739-40
3. मीरा बाई की रोचक कथा देखिए, जिसे वृंदावन के गोसाई ने अपने सम्मुख उपस्थित होने की अनुमति नहीं दी। मेकालिफ, चतुर्थ, 353 के अनुसार।
4. सन्तानोत्पत्ति के स्त्री के कार्य और उसे दिये जाने वाले सम्मान के लिये है म.अ., 192, 117
5. विभिन्न वर्णन तुलनीय। कु. खु. 657-658, तबकात-ए-नासिरी (पाण्डुलिपि), 196.
6. आधुनिक रिवाजों के लिए रास, फीस्ट्स, 98.
7. आइने अकबरी, द्वितीय 188, अबुल फजल के पौत्र के लिए, जिसका नामकरण अकबर द्वारा किया गया था, वहीं, 282.
8. प. (हि.), 124-6 जायसी का वर्णन, आधुनिक सादृश्य के लिए शाह, 120 और ग्रियर्सन, प्रादेशिक विचित्रताओं के लिए तुलनीय बरबोसा, प्रथम 116-17.

9. इब्नबतूता, द्वितीय 47-9, उपहार में स्त्रियां दिये जाने के लिए कु. खु., 370, राजस्थान में दहेज में श्देवधारीश् नामक दासियों के दिये जाने के टॉड, द्वितीय 370-1, जो बहुधा वर सरदार की रखैलें हो जाती। ज. डि. लै., 1927, 2-3.
10. दे. रा. 285, किस प्रकार मृत व्यक्ति की पत्नी ने अपना बुरका उतारकर फेंका और शोकाकुल होकर अपने बाल विखेर लिये, शोक प्रकट करने की अवधि की लम्बाई और उसके प्रदर्शन के स्वरूप के लिये, फ्रेम्प्टन, 130.
11. थाम्पसन 19, किस प्रकार सिकन्दर के सैनिकों ने पंजाब में इसका प्रचलन पाया।
12. फ्रेम्प्टन, 127 किस प्रकार अनेक पत्नियों के साथ जलाते समय प्रिय पत्नी को अपनी गर्दन पति की बांह पर रखने दिया जाता।
13. चित्तौड़ के राजा रतनसेन की दो उप पत्नियों की कथा तुलनीय है जिसमें वे दोनों बलिदान की अन्तिम क्रिया में जीवन-पर्यन्त की अपनी आपसी कटुता और झगड़े भूल गई। दोनों पति के शव के अगल-बगल लकल सद्भावनापूर्वक बैठी और शान्ति से दोनों रानियां ज्वालाओं की भेंट हो गई। पद्मावत (हि.), 295.
14. इब्नबतूता के वर्णन के लिए, कि. रा., द्वितीय 13-14
15. अतिशय क्रूरता और शौर्य तथा सद्भावना की कमी के उदाहरण के लिए चन्देरी के भैया पूरनमल का मामला देखिए, कबीलों के आपसी युद्धों में राजपूतों के जौहर के लिये टॉड, द्वितीय, 744.